ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 120-122**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

महिलाओं के विरूद्ध अपराध : कारण एवं नियंत्रण

डॉ० संयुक्ता कुमारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर– बी०बी०एम०बी०जी० कन्या महाविद्यालय, बिहटा, पटना (बिहार) भारत

Received-22.02.2025, Revised-30.02.2025, Accepted-06.03.2025 **E-mail : kumari.sanyuktaji@gmail.com**

सारांशः ***पुरातन भारतीय वाङ्मय के वैचारिक आलोक में देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि स्त्रियों के प्रति भारतीय मनीषियों की युगानुरूप भाव अभिव्यंजित हुए हैं। उनकी दृष्टि में एक स्त्री उदात्त भावनाओं से युक्त है। उसमें "स्व" उदात्त भावनाओं से युक्त है / उसमें 'स्व' के प्रति पूर्ण सम्मान की भावना सन्निहित है। वे स्वभाव से कोमल हैं, किन्तु उनकी कोमलता परिस्थिति के अनुरूप कठोर होना भी जानती है। भारतीयता से अनुराग, त्याग भावना का चरमोत्कर्ष, जीवन की प्रत्येक स्थिति में पुरुष का साथ देने के लिए सन्निद्ध है, उत्साह, स्वावलम्बन तथा गौरव भावना से परिपुष्ट यह भारतीय मनीषियों द्वारा चित्रित स्त्री की विशेषता है किन्तु दूसरी ओर उनकी आँखों के सम्मुख स्त्री के प्रति पुरुष के अन्याय और स्त्री की प्रताड़ित एवं दयनीय अवस्था भी रही है। इसीलिए उन्होंने यथा अवसर स्त्री जीवन की विभिन्न समस्याओं पर अपने विचार प्रकट किये हैं। बाल–विवाह, शिक्षा, विधवा–विवाह, वेश्यावृत्ति, असमान विवाह आदि समस्याएँ विशेष रूप से ली गई हैं।***

कुंजीभूत शब्द– उदात्त भावना, कोमलता, अनुराग, त्याग भावना, चरमोत्कर्ष, उत्साह, स्वावलम्बन, गौरव भावना, परिपुष्ट

'अरे नराधम तुझे न लज्जा आती ? निश्चय तेरी मृत्यु मुण्ड पर मँडराती है।
मैं अबला हूँ, किन्तु न अत्याचार सहूँगी, तुम दानव के लिए चण्डिका बनी रहूँगी ।'

'जय भारत में द्रोपदी कीचक की वासना का कारण बनती है, किन्तु द्रोपदी को अपने सतीत्व पर पूर्ण विश्वास है– यही भावना उसकी शक्ति का आधारतन्त्र है। वह कीचक द्वारा किये गये दुर्व्यवहार पर उसे फटकारती है तथा उसकी तीव्र स्वरों में भर्त्सना करती है।

पति वियोग के अवसर पर विरहिणी यशोधरा संयमित जीवन–यापन करने के लिए विभिन्न प्रसाधनों का त्याग करती है । उसका सिन्दुर बिन्दु एक अंगार है जो काम के लिए हर नेत्र है । इसी प्रकार वियोग काल में काम उर्मिला पर भी अपना अधिकार दिखाना चाहता है। प्रारम्भ में तो उर्मिला उससे अनुनय विनय करती है, पर फिर भी जब उसे सफलता नहीं मिल पाती तब वह काम को ललकारती हुई कहती हैं कि मैं कोई विषयासक्ता नहीं हूँ जो तुम मुझे अपने जाल में फँसा सको। यदि तुम में शक्ति है तो मेरे इस सिन्दुर–बिन्दु को देखो जो तुम्हारे लिए हर के तीसरे नेत्र के समान घातक होगा।[1]

निस्सन्देह, पुरातन भारतीय वाङ्मय के वैचारिक आलोक में देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि स्त्रियों के प्रति भारतीय मनीषियों की युगानुरूप भाव अभिव्यंजित हुए हैं। उनकी दृष्टि में एक स्त्री उदात्त भावनाओं से युक्त है। उसमें "स्व" उदात्त भावनाओं से युक्त है। उसमें 'स्व' के प्रति पूर्ण सम्मान की भावना सन्निहित है। वे स्वभाव से कोमल हैं, किन्तु उनकी कोमलता परिस्थिति के अनुरूप कठोर होना भी जानती है। भारतीयता से अनुराग, त्याग भावना का चरमोत्कर्ष, जीवन की प्रत्येक स्थिति में पुरुष का साथ देने के लिए सन्निद्ध है, उत्साह, स्वावलम्बन तथा गौरव भावना से परिपुष्ट यह भारतीय मनीषियों द्वारा चित्रित स्त्री की विशेषता है किन्तु दूसरी ओर उनकी आँखों के सम्मुख स्त्री के प्रति पुरुष के अन्याय और स्त्री की प्रताड़ित एवं दयनीय अवस्था भी रही है। इसीलिए उन्होंने यथा अवसर स्त्री जीवन की विभिन्न समस्याओं पर अपने विचार प्रकट किये हैं।[2] बाल–विवाह, शिक्षा, विधवा–विवाह, वेश्यावृत्ति, असमान विवाह आदि समस्याएँ विशेष रूप से ली गई हैं। वे कहीं–कहीं स्त्रियों की दुरावस्था से क्षुब्ध होते दिखाई पड़ते हैं। उन्होंने अधिकारहीन दयनीय स्त्रियों को पुरुषों की क्रूरता का शिकार बनते देखा है। इस सन्दर्भ में उन्होंने पुरुषों के पाशविक व्यवहार का अंकन किया है। पन्त जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है– समाजवादी दृष्टि से स्त्री शोषिता है। पन्त जी की शोषिता स्त्री का स्वरूप उस ग्राम युवती में दिखाई पड़ता है जिसका रूप यौवन और मद दुःखों से पिस कर असमय ही नष्ट हो जाता है।

'रे दो दिन का उसका यौवन ।
सपना छनका रहता न स्मरण
दुःखों से पिस दुर्दिन में घिस जर्जर हो जाता उसका तन
ढह जाता असमय यौवन घन ।
वह जाता तट का तिनका
जो लहरों से हँस खेला कुछ क्षण'

पंत जी के आकर्षण का केन्द्र पीड़ित एवं शोषित स्त्रियाँ रही हैं। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा है:

'योनि नहीं है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित,
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित[4]

वे स्त्री को पूर्ण सामाजिक स्थिति प्रदान कर मानव की वास्तविक जीवन संगिनी के रूप में देखना चाहते हैं और इस प्रकार प्रेम के आदान–प्रदान को एक पवित्र रूप में देखना चाहते हैं। इसलिए वे कहते हैं:

'मुक्त करो नारी को मानव,
चिर बन्दिनी नारी को
युग–युग की बर्बर कारा से
जननि सखि प्यारी को[5]

एक तथ्य के रूप में यह भी स्वीकार किया जाता है कि इडेन के बाग में मौलिक पाप. या आदि पाप स्त्री का है। उसने निषिद्ध फल का स्वाद या जायका लिया, आदम को प्रलोभित किया और तभी से इसके कारण दण्ड भोग रही है तो यह स्पष्ट है कि एक स्त्री का अपराध सब मनुष्यों के लिए दण्डाज्ञा का कारण हुआ। स्त्री के द्वारा पाप ने संसार में प्रवेश किया और पाप के द्वारा मृत्यु ने और इस प्रकार सब मनुष्यों में मृत्यु फैल गई, क्योंकि सबों ने पाप किया है।[6] ईसाईयों के उत्पत्ति–ग्रन्थ में कहा गया है कि 'ईश्वर

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

ने कहा– I will greatly multiply thy sorrow and thy conception] in sorrow thou shalt bring forth children and thy desire shall be to thy husband and he shall rule over thee-" समाजशास्त्री इस उद्धरण को समाज में स्त्रियों की स्थिति के लिए मिथकीय औचित्य के रूप में स्वीकार करेंगे। उपर्युक्त कथन के परिप्रेक्ष्य में स्त्रियाँ युगों–युगों से चली आ रही अपनी मान्य प्रस्थिति का आकलन अपने पति के सम्बन्ध के सन्दर्भ में देख सकती हैं।

स्त्रियाँ के विविध स्वरूपों का दर्शन होता है। वे गर्भधारण करती हैं, बच्चे उत्पन्न करती हैं, वे पुत्री, पत्नी व माता बनती हैं, वे बहू, सास तथा भगिनी आदि के रूप में दाम्पत्य जीवन व्यतीत करती हैं। पारिवारिक जीवन के सारे कृत्यों का भार उनके कन्धों पर रहता है। वे पुरुषों की केवल देख–भाल ही नहीं करतीं बल्कि सांसारिक झांझावतों से जब पुरुष निराशा की गोद में सोना चाहता है तब स्त्री ही उसे सहज करती है । स्वी पति के प्रति आत्मसमर्पित होती है किन्तु फिर भी परम्परागत समाज में पुरुष सत्ता के अधीनस्थ होती है, और उच्च व्यावसायिक प्रस्थिति तथा सत्तात्मक शक्ति से सम्बन्धित प्रस्थिति को प्राप्त नहीं कर सकती है। भारत दुर्दशा नाटक में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने एक सुदृढ़ सुधारक का रूप धारण कर स्त्रियों के विरुद्ध सांघातिक सामाजिक दोषों के प्रति आक्रोश प्रकट किया है। ये सामान्यीकरण कमोवेश विश्व के प्रत्येक ज्ञात मानव समाज में प्रयुक्त किये जा सकते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आलोक में यह कहा जा सकता है कि प्राचीन काल से ही स्त्रियाँ समाज द्वारा प्रताड़ित, उत्पीड़ित, दमित एवं तिरस्कृत होती रही हैं। आज की कृत्रिम सभ्यता में महिला प्रताड़ना का ग्राफ बहुत ऊपर चढ़ गया है। पारिवारिक हिंसा, महिलाओं की प्रताड़ना के बढ़ते वेग को कम करने के लिए तथा उनकी सुरक्षा के लिए बीते साल सितम्बर में ही भारतीय उच्चतम न्यायालय ने घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 का कानून बना दिया था, लेकिन नियम–कायदे बन पाने की वजह से यह बिना धार के हथियार जैसा था। अब नियम–कायदे बन गये हैं और यह कानून गुरुवार 26 अक्टूबर, 2006 से अमल में आ रहा है । इस कानून का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को पुरुषों की हर तरह की हिंसा से सुरक्षा देना है। इसके तहत बिना विवाह के साथ रहने वाली महिला, विधवा और बहनों को भी सुरक्षा मिलेगी । नियम–कायदों के उल्लंघनों को संज्ञेय आदि जमानती अपराध माना जाएगा।

महिलाओं के विरुद्ध अपराध के कारण– महिलाओं के विरुद्ध जो अपराध किये जाते हैं उनमें बलात्कार, अपहरण, दहेज मृत्यु, उत्पीड़न, छेड़–छाड़, लैंगिक संताप, लड़कियों का आयात, अनैतिक अवैध व्यापार, स्त्रियों का अश्लील प्रदर्शन इत्यादि प्रमुख हैं। यद्यपि अपराध के सभी प्रकार धार्मिक तथा नागरिक समूहों द्वारा वर्जित हैं और कानून द्वारा भी प्रतिबन्धित हैं। वे व्यक्ति जो महिलाओं के विरुद्ध ऐसे अपराधिक कृत्य करते हैं, उन्हें हेय एवं घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। परन्तु, फिर भी ऐसे अपराधों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। एतदर्थ, इनकी निरन्तरता और कारणों को समझने के लिए समाजशास्त्रीय विश्लेषण की आवश्यकता है।महिलाओं के विरुद्ध अपराध के कारणों पर यद्यपि व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक अध्ययनों का अभाव है किन्तु अपराधशास्त्रीय कलेवर का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवलोकन करने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि महिलाओं के विरुद्ध अपराधों के कारणों की व्याख्या व्यक्ति के व्यक्तित्व प्रतिरूपों के आधार पर की जा सकती है जो उसके जैवजननिक, मनोजननिक तथा समाजजननिक विशेषताओं का समग्र संगठन है तथा जो उसके आत्मनिष्ठ और प्रत्यक्ष आचरण को सापेक्षतः स्थायित्व प्रदान करता है।

1. जैवजननिक कारक : व्यक्ति की जैवजननिक विशेषताएँ उसकी जैविक संरचनाओं से उत्पन्न होती है। जैविक संरचनाओं के अन्तर्गत कुछ विचारकों जैसे लुईस बेर्मन7 तथा स्लाप एवं स्मिथ8, काटन9 हन्टर10 तथा बेने11 आदि ने मूल प्रवृत्तियों, आनुवंशिकता ग्रन्थियों तथा शारीरिक दोषों की अपराधिक व्यवहार के लिए उत्तरदायी ठहराया है। इस संदर्भ में महिलाओं के विरुद्ध अपराध करने वालों की जैविक संरचनाओं की अपराधिक तीव्रता को निम्नलिखित सैद्धान्तिक सूत्रों में बाँधा जा सकता है ।

I. किसी व्यक्ति के मूल प्रवृत्तिजन्य आदिम या जैविकीय स्वभाव का दमन सामाजिक जीवन में जितना अधिक होगा, उसमें महिलाओं के विरुद्ध अपराध करने की प्रवृत्ति उतनी ही अधिक तीव्र होगी।
II. किसी व्यक्ति की ग्रन्थियाँ जितनी अधिक दोषपूर्ण होंगी, उसमें स्त्रियों के विरुद्ध अपराधिक व्यवहार करने की प्रवृत्ति उतनी ही अधिक तीव्र होगी ।
III. किसी व्यक्ति में शारीरिक दोष जितने अधिक होंगे, उसमें महिलाओं के विरुद्ध असामाजिक व्यवहार करने की प्रवृत्ति उतनी ही अधिक होगी ।

यद्यपि वर्मन, स्लाप एवं स्थिम, काटन, हन्टर तथा बेने आदि विद्वानों ने अपने अध्ययनों द्वारा यह प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि अपराधिता एवं जैवजननिक कारकों में सार्थक सम्बन्ध है, किन्तु इन विद्वानों के अध्ययन परिणामों के आधार पर अपराधिता की उत्पत्ति के एक सामान्य नियम का प्रतिपादन नहीं किया जा सकता ।

2. मनोजननिक कारक : महिलाओं के विरुद्ध अपराध के उद्‌गम स्रोत के सन्दर्भ में एक अन्य धारणा मनोजननिक कारकों की है जो प्रमुखतः मनोचिकित्सकों, मनोविश्लेषणवादियों एवं मनोवैज्ञानिकों की देन है। इन सिद्धान्तवादियों का मत है कि बुद्धि तथा अन्य मानसिक योग्यताएँ, जैसे– मनोजननिक तथ्य व्यक्तित्व गुण की भी विशिष्टताएँ व्यक्ति में अपराधिता को जन्म देती है । इन सिद्धान्तकारों में मतों को निम्नलिखित सैद्धान्तिक सूत्रों में रखा जा सकता है–

I. मनोजननिक विलक्षणताओं का जितना अधिक प्रादुर्भाव होगा, व्यवहार में अपराधिता की सम्भावना उतनी ही अधिक बढ़ जाएगी ।
II. बुद्धि एवं मानसिक योग्यताओं की विलक्षणता एवं अपराधिता में गहरा सम्बन्ध है।
III. किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व जितना अधिक दोषपूर्ण होगा, उसका व्यवहार सामाजिक–सांस्कृतिक परिभाषाओं में उतना ही अधिक विपरीत दिशा में होगा ।

महिलाओं के विरुद्ध अपराधिक व्यवहार के सन्दर्भ में मनोजननिक कारक जैसे– बुद्धि व मानसिक योग्यताएँ, व्यक्तित्व गुण जैसे आत्म की अवधारणा तथा व्यक्तित्व गुण यद्यपि महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

3. समाजजननिक कारक: जैवजननिक एवं मनोजननिक कारकों के अतिरिक्त व्यक्तित्व संगठन का एक अन्य पक्ष समाजजननिक है। इन तीनों को समग्रता का परिणाम व्यक्तित्व है। समाज जननिक कारकों के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्ध, समाजीकरण को प्रक्रिया, संस्कृति, सामाजिक नियन्त्रण की व्याख्या तथा सामाजिक संरचना की प्रमुख भूमिका है। इनसे सम्बन्धित अनुभवों के आधार पर ही सामाजननिक व्यक्तित्व गुणों व मनोवृत्तियों का निर्माण होता है। अतः यहाँ इस सन्दर्भ में विचार किया जा सकता है कि विभिन्न समाजजननिक कारक क्या है? ये किस प्रकार महिलाओं के विरुद्ध अपराध की पृष्ठभूमि निर्मित करते हैं तथा

इस पृष्ठभूमि के आधार पर निर्मित मनोवृत्तियाँ किस रूप में महिलाओं के विरुद्ध अपराधिक व्यवहार को जन्म देती है। अतः महिलाओं के विरुद्ध अपराधिक व्यवहार के समाजननिक कारकों के परिणामों को सैद्धान्तिक सूत्रों के रूप में इस प्रकार रखा जा सकता है –

I. पारिवारिक तथा वैवाहिक कुसमायोजन की समस्या जितनी अधिक गम्भीर होगी, महिलाओं के विरुद्ध अपराध की दर उतनी ही होगी ।
II. सामाजिक समूहों के मध्य सामाजिक सम्बन्धों में टूटने की तीव्रता जितना ही अधिक होगी, उनमें महिलाओं के विरुद्ध अपराध करने की प्रवृत्ति उतनी ही अधिक होगी।
III. सामाजिक आदर्शमानकों एवं मूल्यों के प्रति व्यक्तियों का भावात्मक लगाव जितना ही कम होगा, वे भावावेश में महिलाओं के विरुद्ध अपराध उतना ही अधिक करेंगे।
IV. सामाजिक नियन्त्रण के अधिकरण या साधन व्यवहार के नियमन में जितने ही अधिक कमजोर होंगे, ओं के विरुद्ध अपराधिक व्यवहार उतने ही अधिक होगे।
V. समाज द्वारा स्वयं अपराधिक कृत्यों को प्रोत्साहन जितना ही अधिक दिया जाएगा। महिलाओं के विक अपराध उतने ही अधिक होंगे।
VI. सांस्कृतिक लक्ष्यों एवं संसाधनों के बीच असन्तुलनको पात्रा जितनी ही अधिक होगी, महिलाओं के विरुद्ध अपराधिक व्यवहार की सम्भावना उतनी ही अधिक होगी।
VII. सामाजिक संरचना की प्रकृति जितना ही अधिक विचलनकारी या विपथगमनात्मक या अपराधि होगी, लोगों में महिलाओं के विरूद्ध अपराध करने की प्रवृति उतनी ही अधिक होगी ।

महिलाओं के विरूद्ध अपराध को नियन्त्रित करने के उपाय– महिलाओं के विरुद्ध अपराध को नियन्त्रित करने के सन्दर्भ में हम निम्नलिखित उपायों को निर्दिष्ट कर सकते हैं:

1. महिलाओं के प्रति लोगों में समाज की परम्परागत धारणा की प्रति विकर्षण, अनास्था तथा घृणा और स्त्री वर्ग के लिए प्रेम और श्रद्धा के भाव जागृत करना;
2. पुरुष प्रभुत्व समाज में व्यक्ति के रूप में महिलाओं की पहचान कराने की आवश्यकता;
3. शोषण और दमन के विरोध में महिलाओं का संघर्ष,
4. जन आन्दोलनों द्वारा महिलाओं में उनके अधिकारों के प्रति चेतना जागृत करना;
5. सामाजिक कानूनों को अधिक प्रभावशाली बनाना तथा उनके हितार्थ और नये विधान बनाना;
6. वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति को स्त्रियों के दमन और शोषण के परम्परागत रचनातन्त्र को चुनौती देने योग्य बनाना;
7. परिवारिक न्यायालयों का विस्तार करना तथा वादों का शीघ्रातिशीघ्र निस्तारण करना;
8. न्यायाधीशों द्वारा असहाय, पीड़ित तथा संकोचशील स्त्रियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण न्याय करना,
9. पीड़ित महिलाओं के लिए उद्धारगृहों की स्थापना करना;

इन उपर्युक्त उपायों के अतिरिक्त महिलाओं को इस पुरुष प्रभुत्व समाज में व्यक्ति के रूप में स्वयं पहचान बनानी होगी, तभी उनका उत्पीड़न शोषण और दमन बन्द होगा। ज्ञातव्य है कि जब भी कोई महिला अपने आपको एक व्यक्ति के रूप में पहचान प्रकट की है, उसको अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। किन्तु हिम्मत हारने की बात नहीं है। यह स्वीकार करने योग्य है कि महिलाएं पुरुषों से किसी भी तरीके से कमजोर नहीं हैं। भारत के विकास में उनका बहुत योगदान रहा है। ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध स्वतन्त्रता संग्राम में उन्होंने हिस्सा लिया। भारत के इतिहास में उन कठिन समय में उन्होंने बहुत सामाजिक कार्य किया। राष्ट्रीय हित में इसीलिए होता है क्योंकि वे प्रायः अपने को अधमाधम एवं निरीह प्राणी के रूप में समझती हैं। इसके विपरीत उनकी प्रतिष्ठा श्रम और पौरुष पर ही आधृत हो सकती है। इन दोनों के अभाव में स्त्री जाति का नाश अवश्यम्भावी है । अतः कहना ही होगा कि

'मानेगी सन्तोष जाति जो, रौख रूप व्यवस्था से वह ऊँचा सिर कर न सकेगी, अपनी बुरी अवस्था से ।
जिसको अपनी बुरी दशा से असन्तोष हो जायेगा, उसका उमड़ा हुआ कलेजा ऊँचा आसन पायेगा ।[12]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मैथलीशरण गुप्त, जय भारत, पृ०–266.
2. मैथलीशरण गुप्ता, साकेत, नवम सर्ग, पृ०–227.
3. सुमित्रानन्दन पन्त, गाम्या, ग्रामयुवती, पृ०–19.
4. सुमित्रानन्दन पन्त, युगवाणी, नर की छाया, पृ०–60.
5. वही, नारी, पृ०–58.
6. Bible : New Testament] Ro- 5] 12&17(7&25(1 cor(15] 22] Aph- 2]3-
7. Louish Berman] The glands Regulating Personality] The macmilan company] New York] 1922-
8. MaÛ Schlapp and E-H- Smith] The new criminology] Boni and Liveright] New York] 1929-
9. H- Catton] The Defective Deliguent and insame : The Relation of Local infection o prevention] Princetion University Press] Princetion] N-J- 1921-
10. W- Hunter] "Chronic sepsis as a cause of mental Disorder]" Sceience] Vol- 73] Oct 1927] pp&549&563-
11. ¼11½ Ralph S- Banay] " Physical Disfigurement as a factor in Delinquency and Crime]" Federal Probation] Vol- 7] Jan&March] 1943] pp&20&24-
12. (12) पं० माखनलाल चतुर्वेदी रू मरण ज्वर 74 से उद्धृत ।

*****